1

1.

प्रो० किशन कुमार
हिन्दी विभाग
जे० के० कॉलेज
[illegible]

हिन्दी साहित्येतिहास का कालविभाजन एवं नामकरण पर विचार कीजिए।

उत्तर :- हिन्दी-साहित्य के काल-विभाजन के मूल में समाज की परिवर्तनशीलता है। विभिन्न युगीन सामाजिक जीवन के परिप्रेक्ष्य में साहित्य की अखंड एवं अविच्छिन्न भावधारा का अनुशीलन और मूल्यांकन ही साहित्य का इतिहास है। जिस काल में जिस विशेष ढंग की रचनाओं की प्रचुरता होगी, उसका नामकरण भी उन रचनाओं के आधार पर किया जाएगा। उदाहरण स्वरूप भक्तिकाल और रीतिकाल है।

दूसरी बात यह है कि यद्यपि प्रत्येक काल की रचनाओं में कुछ विशेष सामान्य लक्षण पाए जाते हैं, लेकिन उसका यह तात्पर्य नहीं कि एक काल में अनेक प्रकार की रचनाएँ नहीं पायी जाती हैं। वास्तव में, एक काल में जिस प्रवृति का प्राधान्य होता है, उसी के आधार पर काल का नामकरण होता है। उदाहरण के लिए भक्तिकाल में रीतिकाल एवं वीर रस की रचनाएँ मिलती हैं। आधुनिक काल में भी रीतिकाल की रचनाएँ मिलती हैं।

तीसरी बात यह है कि साहित्य के क्षेत्र में काल-विभाजन का यह तात्पर्य नहीं होता कि एक काल के समाप्त होते ही दूसरे दिन साहित्यिक धारा दूसरी दिशा में प्रवाहित होने लगती है। वास्तव में साहित्य के इतिहास में गणित के नियम लागू नहीं होते। एक काल की विचारधारा दूसरे काल तक जाती है। एक प्रकार की साहित्यिक प्रवृति का पूर्ण अंत तो वैसे भी नहीं होता। साहित्यिक परिवर्तन आंतरिक क्रिया नहीं है कि जीवन की परिस्थितियों के बदलते ही साहित्यिक स्वरूप भी बदल जाय। कभी-कभी साहित्य ही समाज का नियंत्रण करता है एवं उसे नवीन मार्ग सुझाता है। शक्तिशाली साहित्य वही है जो युगानुकूल परिवर्तित होकर समाज को प्रगति और सुख सम्पन्नता की ओर ले जाए। प्रतिभाशाली साहित्यकार लकीर का फकीर नहीं होता।

Oxford

चौथी बात यह है कि कभी-कभी किसी काल-विशेष का नामकरण प्रतिभाशाली साहित्यकारों के नाम पर भी कर लिया जाता है। वे साहित्यकार अपनी प्रतिभा के बल से साहित्यिक गतिविधि को एक विशेष दशा की ओर मोड़ने में सफल होते हैं। हिन्दी-साहित्य के इतिहास में भारतेन्दु-युग और द्विवेदी-युग ऐसे ही युग हैं।

ऐतिहासिक और राजनीतिक परिस्थितियों के आधार पर भी काल-विभाजन अवलंबित रहता है। इतिहास हमें बताता है कि हिन्दी-साहित्य का आदि युग अशांतिपूर्ण था और साहित्यिक खोज ने भी हमें वीरगाथात्मक ग्रंथ प्रदान किए। हमें सिद्धों, नाथों, जैनों आदि का साहित्य मिला और मिलता जा रहा है। हो सकता है उस समय धर्म-संबंधी विचारधारा ही प्रमुख हो।

किसी भी साहित्य का काल-विभाजन एक कठिन समस्या है, क्योंकि साहित्य मनोदशा का मूल उद्गार है। परिस्थितियों में परिवर्तन होने के कारण मानव-मनोदशा परिवर्तित होती रहती है। अतः साहित्य भी उसी के अनुरूप परिवर्तित होती है। इन्हीं परिवर्तित मनोदशाओं के साथ साहित्य-परंपरा का सामंजस्य स्थापित करना साहित्य का इतिहास है। हिन्दी-साहित्य के इतिहास की एक सुदीर्घ परंपरा बन चुकी है। अध्ययन-अध्यापन की सुविधा के लिए विद्वानों द्वारा हिन्दी-साहित्य-परंपरा का सामंजस्य स्थापित करने के लिए साहित्येतिहास में काल-विभाजन और नामकरण में मतभेद दृष्टिगोचर होता है। हिन्दी के सभी इतिहास लेखकों ने मूलतः हिन्दी-साहित्य को आदि, मध्य और आधुनिक काल में बाँटा है। साहित्य के इतिहास के काल-विभाजन में प्रायः प्रवृत्ति, कर्ता, पद्धति और विषय पर ध्यान दिया जाता है।

इस प्रकार इतिहास की चेतना और काल-विभाजन की स्थिति स्पष्ट करते हुए हिन्दी-साहित्य के इतिहास को चार काल-खंडों में विभक्त किया गया है:-

1. आदिकाल या वीरगाथा काल - 1050 से 1350 ई०
2. पूर्वमध्यकाल या भक्तिकाल - 1350 - 1650 ई०
3. उत्तर मध्यकाल या रीतिकाल - 1650 - 1850 ई०
4. आधुनिक काल या गद्यकाल - 1850 से अबतक।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के पूर्व मिश्रबंधुओं ने हिन्दी-साहित्य के इतिहास का काल-विभाजन सर्वप्रथम प्रस्तुत किया था। लेकिन कतिपय आलोचक उनके काल-विभाजन से संतुष्ट नहीं हैं। उनका कहना है कि मिश्रबंधुओं ने साहित्य का इतिहास नहीं लिखा, वरन् उन्होंने कवियों की कहानी का संग्रह मात्र किया है, लेकिन अन्य विद्वानों का कहना है कि मिश्र-बंधुओं ने काल-विभाजन की नींव डाली। हिन्दी-साहित्य के प्रारंभिक काल को मिश्रबंधुओं ने आदिकाल कहकर संबोधित किया है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इस आदिकाल के नामकरण को लगभग स्वीकार करते हुए इसे वीरगाथा-काल कहा है और इसका काल संवत् 1050 से 1375 माना है।

वीरगाथाकाल नामकरण के लिए शुक्ल जी ने यह तर्क दिया कि इस काल में वीरगाथात्मक रचनाओं की प्रचुरता थी और इसके परिणामस्वरूप उन्होंने बारह रचनाओं की गणना की है, जबकि इस समय इसके अतिरिक्त जैनों, नाथों और सिद्धों की रचनाएँ भी प्राप्त होती हैं, जिसे शुक्ल जी नगण्य स्थान दिया है। आचार्य शुक्ल-द्वारा प्रतिपादित हिन्दी-साहित्य की आरंभिक काल का नामकरण आजकल के आलोचकों द्वारा असंगत प्रमाणित हो चुका है। साथ ही जिन बारह कृतियों को आधार बनाया गया, वह अधिकांशतः अप्रमाणिक हैं।

आचार्य शुक्ल ने अपने काल-विभाजन एवं नामकरण का स्वरूप स्पष्ट करते हुए लिखा है कि - "जिस कालखंड के भीतर किसी विशेष ढंग की रचनाओं की प्रचुरता दिखाई पड़ी है, वह एक अलग काल माना गया है और उसका नामकरण उन्हीं काल की रचनाओं के स्वरूप के अनुसार किया गया है। फिर भी यह नहीं समझना चाहिए कि किसी काल में दूसरी प्रकार की रचनाएँ नहीं हुई थी जैसे वीरगाथाकाल में नगण्य रूप में ही सही भक्ति और योग-संबंधी साहित्य भी लिखे गए। भक्तिकाल में और रीतिकाल में भी वीर रस के अनेक काव्य लिखे गए। किसी विशेष काल में विशेष प्रकार की रचना की अधिकता का केवल यही तात्पर्य है कि उस काल में दूसरी रचनाएँ भी हुई, पर उनकी संख्या कम थी।

शुक्ल जी के अनुसार हिन्दी-साहित्य का वैज्ञानिक काल-विभाजन के दो प्रकार के आधार स्वीकार किए

है। पहला किसी विशेष प्रकार की रचनाओं की प्रचुरता और दूसरा ग्रंथों की प्रसिद्धि। किसी काल के भीतर अगर एक ही प्रवृत्ति वाले बहुत से अच्छे-अच्छे ग्रंथ लिखे गए हैं तो शुक्ल जी ने इन ग्रंथों के आधार पर काल का नामकरण किया है। शुक्ल जी के इन दो सिद्धांतों को मानकर अन्य इतिहासकार भी इस सिद्धांत के अनुसार काल-विभाजन एवं नामकरण करते आ रहे हैं। शुक्ल जी के काल-विभाजन की महत्ता तब स्पष्ट होती है, जब हमलोग उनके पूर्व के इतिहासकारों-द्वारा किये गए विभाजन पर दृष्टिपात करते हैं। सबसे पहले फ्रांसीसी लेखक 'गार्सा द तासी' ने भारतीय आधुनिक आम भाषाओं का इतिहास लिखा, जिसमें कुछ कवियों एवं उनकी रचनाओं का विवरण मात्र है। इसके बाद शिवसिंह सेंगर ने 1883ई० में हिन्दी-साहित्य का एक इतिहास लिखा, उसमें सेंगर जी ने हिन्दी कवियों की जीवनी एवं घटनाओं का उल्लेख मात्र किया। 1888ई० में जॉर्ज ग्रियर्सन ने 'मॉडर्न वर्नाक्यूलर लिटरेचर ऑफ हिन्दुस्तान' नामक ग्रंथ लिखा, जिसमें उन्होंने हिन्दी-साहित्य और प्रवृत्तियों के निर्देश की चेष्टा की। लेकिन इन तीनों इतिहास-ग्रंथों में काल-विभाजन नाम-मात्र का ही है। जो कुछ है, वह अव्यवस्थित एवं अवैज्ञानिक है। इसके बाद मिश्रबंधुओं-द्वारा लिखित इतिहास-ग्रंथ है, जिसमें लगभग 5000 कवियों पर प्रकाश डाला गया है।

मिश्रबंधुओं ने भी किसी काल-विभाजन की वैज्ञानिक-पद्धति को नहीं अपनाया। मिश्रबंधुओं ने प्रवृत्तियों की अपेक्षा कालावधि का विशेष ध्यान रखा है। इसका उद्देश्य केवल यही था कि 900 वर्षों की काव्य-परंपरा को समय के अनुसार सजाकर किसी प्रकार जनता के सामने रखना। मिश्रबंधुओं ने काल-विभाजन का आधार कहीं समय, कहीं रचनाओं की प्रौढ़ता, कहीं अलंकार की प्रवृत्ति तथा कहीं कवियों की उत्कृष्टता को बनाया है। उन्होंने प्रारंभिक काल को आदिकाल कहा। भक्तिकाल को प्रौढ़ आध्यात्मिक काल मान लिया है। रीतिकाल को दो खंडों में बाँटकर पूर्व अलंकृत काल और उत्तर अलंकृत काल के नाम से अभिहित किया है। उन्होंने कुछ कवियों के नाम पर भी काल-विभाजन की चेष्टा की है, जैसे-तुलसी काल, बिहारी काल। इसप्रकार आलोचना की दृष्टि से देखने पर जान पड़ता है कि मिश्रबंधुओं-द्वारा प्रस्तुत नामकरण अवैज्ञानिक है। कुछ मिलाकर शुक्ल-द्वारा किए गए विभाजन और नामकरण ही सर्वमान्य हुए कुछ [illegible]